बागबाँ आया गुलिस्ताँ में कि सैय्याद आया

उत्तर बिहार का एक पिछड़ा इलाका है – रामडीह, लेकिन वैश्विक विधान को लेकर आज इसके संबंध में बहुत सी भविष्यवाणियाँ की जा रही हैं। कहने वाले गंभीर ढंग से कह रहे हैं कि आने वाले समय में यह इलाका इत्र की नगरी के रूप में जाना जायेगा और विश्व के मानचित्र पर अपनी पृथक सुगंध बिखेरेगा। जिस तामझाम के साथ रामडीह में एन. आर. आई. हुलास बाबू की परफ्यूम फैक्ट्री बैठ रही है, उसे देखकर तो ऐसा ही लगता है पर भविष्य चूकि हमेशा अलक्षित होता है इसलिए संभावनाओं को लेकर हम अभी से कोई निश्चित भविष्यवाणी के पक्ष में नहीं हैं। हाँ, रामडीह गाँव के लोगों की खुशी और क्षोभ को लेकर हम जरूर कुछ सोचने को बाध्य हो रहे हैं।

तो मित्रों ! कथा का मंगलाचरण हम रामडीह गाँव के 'महंती चौक' पर विमर्श करते कुछ समय–सजग व्यक्तियों के संवाद को ही मान कर चलें। वैसे कथा का मंगलाचरण इतिहास के लंबे काल–प्रवाह से जुड़ा सुनारी दाई के जीवन के मार्मिक वृतांत से भी हो सकता था लेकिन गड़े मुर्दे हम क्यों उखाड़ें – क्यों हम गुलाब की खेती करने आये एन. आर. आई. हुलास बाबू को कुकुरमुत्ते की याद दिलायें ? हुलास बाबू भी भला क्या सोचेंगे – उनके नथुनों में अचानक गुलाब की सुगंध की जगह मलवे की दुर्गंध कहाँ से भर गई ? आखिर वे अपने गाँव को इत्र की नगरी बनाने आये हैं – मलवे के ढेर पर गोबरछत्ते उगाने तो नहीं –––– ।

वैसे कहने को आप कह सकते हैं कि गोबरछत्ता यानि मसरूम आज स्टार होटलों का लजीज व्यंजन है । एक उद्योगपति का ध्यान इस ओर खींचने में हर्ज ही क्या है ? परन्तु मित्रों, सच तो यह है कि गाँव के लोग आज भी मसरूम को कुकुरमुत्ता या गोबरछत्ता ही कहते हैं। अब आप ही सोचिए, इस संगति से कैसी विसंगति फैलेगी ? कहाँ इत्र, कहाँ गोबर – इसलिए छोड़िए इस प्रसंग को ! चलिए महंती चौक का नजारा लेने – जहाँ गाँव के लोग दो गुटों में बँट कर हुलास बाबू की इत्र फैक्ट्री की मीमांसा करने में लगे हैं। लेकिन उनके वाद–विवाद प्रतिवाद से पहले कुछ 'महंती चौक' के बारे में –––––––

यह रामडीह गाँव का सबसे पुराना चौक है। दो सौ वर्षों से भी अधिक पुराना यह चौक अभी तक चेहराविहीन था। स्वर्गीय महंत रामइकवाल सिंह के परपोते एन. आर. आई. हुलास सिंह ने पिछले वर्ष अपने परबाबा की आदमकद मूर्ति इस चौक पर लगवाई है तब से यह मुकम्मल महंती चौक लगने लगा है। संगमरमर की भव्य आदमकद मूर्ति के नीचे सुन्दर लिखावट में अंकित – 'स्वर्गीय महंत रामइकबाल सिंह – जन्म तिथि 1857 – पुण्य तिथि 1947' के साथ यह चौक अपने साबूत चेहरे और भारी भरकम वजूद के साथ अपनी सार्थकता सिद्ध करने लगा है। साठ–सत्तर के दशक तक इस चौक पर केवल फूस छप्पर टीन से बनी पान–चाय, जलखै (जलपान) की कुछ दुकानें ही हुआ करती थीं। बींसवी सदी के अंत होते–होते ईंट पक्के की कई दुकानें, टेलीफोन बूथ, दवाखाना और सैलून भी खुल गये हैं। नई सदी की शुरूआत होते ही हुलास बाबू ने अपनी विधवा भाभी के नाम पर राजनीतिक दाव पेंच भिड़ाकर एक पेट्रोल पंप भी खुलवा दिया है। इसी पंप के अहाते में टाटा 407 की कई बसें, सुमो, मार्शल जैसी गाड़ियाँ भी लगी रहती हैं जो महियारपुर ,सोनबरसा, जलालगढ़, ढ़ोलबज्जा, जोकीहाट, भवानीपुर, विशनपुर, कासनगर, परमानंदपुर तक अप–डाउन करती ऊपर से नीचे तक कोंच–कोंच कर सवारियों से भरी होती हैं। इस चौक पर सुबह पाँ बजे से रात के दस बजे तक लोगों की गहमा–गहमी बनी रहती है। इस चौक पर सुबह–शाम कचरी, मूढ़ी, घूघनी खाने वालों की भी जबरदस्त भीड़ होती है। दो किलो के बटखरे के नाप का पेड़ा और धान के लावे का बना ओखड़ा, यहाँ का विशेष पसंदीदा खाद्य पदार्थ है जिसे एक बार अगर आप चख लें तो जीभ बार–बार उसके जायके को याद करती रहेगी। इस चौक का माछ मखान और पान भी अपनी अलग साख रखता है।

'महंती चौक' का सबसे बड़ा आकर्षण 'मंगला हाट' है जो बड़े शहरों के मेगा मार्ट से कम महत्व नहीं रखता। यह हाट हर महीने के अंतिम मंगलवार को 'महंती चौक' की बगल से गुजरने वाली सूखी नहर की

मुंडेर से नीचे ढ़लान तक बहुत दूर में पसर कर लगती है। इस हाट में दैनंदिन जीवन की हर चीजें – अनाज पानी, साग–सब्जी, तेल–मसाला, कपड़ा–लत्ता, खेल–खिलौने, कप–प्लेट, साज–श्रृंगार से लेकर बीज, खाद, किरासन, डीजल तक मिलता है। नेपाल से सटे होने के कारण इस हाट में विदेशी वस्तुओं की भी भरमार होती है। घड़ी, कैमरा, मोबाइल, पोलिस्टर कपड़े, रंग–विरंगे छाते, बैग, साबुन, क्रीम, पाउडर, ब्रा, पैंटी जैसी कई आकर्षक चीजें इस हाट में दरी पर फैली सैकड़ों निगाहों को बांधती अपने करीब खींच लाती है और उनकी जेबें खाली करके उन्हें सायोनारा कहती अगले महीने के अंतिम मंगलवार का आमंत्रण देती अदृश्य हो जाती हैं। विगत दस–पंद्रह वर्षों से मंगला हाट तेजी से बाजारवाद की गिरफ्त में कसता जा रहा है।

वैभवशाली वर्तमान की तरह सैकड़ों वर्ष पूर्व के महंती चौक का अतीत भी कम प्रभावशाली और गौरवपूर्ण नहीं है। सन् 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में यह स्थल देसी थलसेना की एक कंपनी का मुख्यालय था और कंपनी सरकार के विरुद्ध गुप्त षड्यंत्रों का केन्द्र बन जाने के कारण इस क्षेत्र में उस समय मार्शल लॉ भी लागू किया गया था। उस समय रामडीह रियासत के राजा बलभद्र सिंह थे। पुत्र नहीं होने के कारण जागीर छिन जाने के भय से वे अंग्रेजी हुकूमत से बहुत वफादारी निभाते थे। वफादारी करके ही जतन से बचाई गई रामडीह की गद्दी उन्होंने अपने इकलौते नाती रामइकबाल सिंह को तड़का में दिया था। यह वह समय था जब निलहे साहबों के अत्याचार से इस क्षेत्र के किसानों का जीवन बहुत त्रस्त था। उस समय इस इलाके के विसनपुर, भवानीपुर, परमानन्दपुर, कासनगर, बभनी जैसे स्थानों में जहाँ नील के कारखाने थे, वहाँ अंग्रजों की अमानवीयता के कारण भीतर ही भीतर विप्लव की आग सुलग रही थी। इसी समय रामडीह रियासत के पटवारी के सबसे छोटे बेटे चतुरी ने इस क्षेत्र के किसानों को संगठित कर सरकारी लगान देना बंद करवा दिया। राजा बलभद्र सिंह अपने रियासत के बागियों की इस बगावत से बहुत बौखला गए क्योंकि इन्हीं जगहों पर उनके छोटे–छोटे मौजे थे जहँ से लगान की राशि वसूली जाती थी और ब्रितानी सरकार को खुश करने के बाद खुद भी रियासत तुष्ट होती थी। दूसरी तरफ ब्रिटिश हुकूमत भी उनसे काफी नाराज थी कि उनका क्षेत्र विद्रोहियों का शरणस्थली बना हुआ है और वे हाथ पर हाथ धरे चुप बैठे हैं। राजा बलभद्र सिंह के लिए यह एक मुश्किल की घड़ी थी। काफी कठिन चुनौती थी – या तो वे चतुरी को वश में करें या अपनी जागीरदारी से हाथ धोये। वे बेचैन थे। चतुरी किसी भी तरह वश में नहीं आ रहा था। उन्होंने बागी बेटे की सजा बाप को कोड़े से खाल खिंचवा कर दी और उसे पटवारी पद से बेदखल करके दर–दर का भिखारी बना दिया। फिर अपनी तरफ से अंग्रेज मजिस्ट्रेट को खुश करने के लिए उन्होंने इसी चौक पर एक सैनिक छावनी बैठाने की पहल की क्योंकि इस चौक से सटे पश्चिम की ओर 'रैहका' का बड़ा मैदान उन दिनों जंगलों, बीहड़ों से घिरा नेपाल की तराई से बिलकुल सटा था और उसी गुप्त रास्ते से क्रांतिकारी लड़के हमेशा अंग्रेजों से बच कर निकल भागते थे। मिलिट्री छावनी बैठने से राष्ट्रभक्तों की शरणस्थली पर चौबीस घंटे की पहरेदारी बैठ गई और छावनी बैठने के कुछ दिनों बाद ही चतुरी की क्षत–विक्षत लाश रैहका के बीहड़ में ग्रामीणों को मिली। चतुरी मर गया और उसकी ठंडी होती चिता के साथ रामडीह में विद्रोह की आग भी ठंडी पड़ गई। महंती चौक से सटा रैहका का मैदान स्थाई रूप से सैनिकों की छावनी में तब्दील हो गया।

आज उसी ऐतिहासिक मैदान में महंत रामइकबाल सिंह के परपोता की इत्र की फैक्ट्री बैठ रही है। जिस मैदान को राष्ट्रीय स्मारक होना चाहिए था वह पूंजी के आधिपत्य से ग्रस्त समय और समाज का एक नायाब तोहफा बनने जा रहा है। गाँव के कुछ लोग इससे बहुत खुश हैं, तो कुछ बहुत नाखुश। गाँव के युवाओं का बहुरंगी मानस रामडीह के क्षितिज का विश्वजनित विस्तार होता देख प्रफुल्लित है। उनके भीतर एक अजीब सा रूमानी उत्साह दिखाई दे रहा है। वे खुश हैं कि रामडीह में इतनी बड़ी फैक्ट्री बैठ रही है। आज उनका गाँव अखबार की सुर्खियों में है। 'ग्लोबल मीट फॉर रिसर्जेंट बिहार' के भव्य समारोह में उनके गांव के एन. आर. आई. हुलास बाबू की तस्वीर मुख्यमंत्री के साथ हाथ मिलाते हुए छपी है। पहली बार गाँव वालों ने लाल बत्ती वाली इतनी सारी गाड़ियों का काफिला देखा है। फैक्ट्री के शिलान्यास में मुख्यमंत्री के साथ छोटे–बड़े कई नेता, अफसर, मंत्री–संतरी सभी उनके गाँव आये और यह सब हुलास बाबू के कारण हुआ। सरकार द्वारा सुविधाएँ और

सुरक्षा के आश्वासन पर उनके हुलास भैया ने बिहार में और भी कई फैक्ट्रियाँ बैठाने की बात कही है। इन बातों से गाँव का युवावर्ग बहुत उत्साहित हैं। वे हुलास बाबू के उद्यमी व्यक्तित्व और देशप्रेम की सराहना करते नहीं थक रहे हैं। ट्रांसर्पोट के मालिक मंटू बाबू, रेलवे के जूनियर इंजीनियर श्यामल बिहारी, ग्रामीण बैंक के मैनेजर सुभाष सिंह, गांव में 'रेड रोज' इंगलिश मिडियम स्कूल खोलने वाले स्वप्नदर्शी युवा पंकज कर्ण जैसे कई लोग हुलास बाबू के दीवाने हो गये हैं। इस गाँव से बाहर शहर में रह कर पढ़ने वाले या नौकरी करने वाले लड़के भी अपने गांव को अखबार के मुख पृष्ठ पर देखकर बहुत खुश हैं। भविष्यजनित कई सुखद संभावनाओं को लेकर उनके मन में कई सपने उम्मीदें और इच्छाँ बलवती हो गई हैं।

दूसरी ओर वैसे लोग हैं जो एन. आर. आई. हुलास बाबू के इस कृत से बहुत क्षुब्ध और नाराज हैं। ऐसे लोगों की नाराजगी का सबसे बड़ा कारण रैहका के मैदान में इत्र की फैक्ट्री का शिलान्यास होना है। अपने गाँव के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की ऐतिहासिक धरती को विश्व बाजार में नीलाम होते देख वे बहुत विचलित हैं। उन्हें क्षोभ है कि जिस मैदान को राष्ट्रीय स्मारक होना चाहिए था वह पूँजी के आधिपत्य से ग्रस्त समय के हाथों क्षत–विक्षत हो रहा है और गाँव के युवा इससे बेखबर इत्र में डूबी हवा के साथ बह रहे हैं। उनकी आँखें तेज रोशनी में चौंधिआई हुई हैं। उन्हें रोशनी के बाहर फैला अपरिमित अंधकार नहीं दिखाई दे रहा है। ऐसे क्षुब्ध लोगों में पूर्णिया जिला स्कूल के सेवा निवृत हेडमास्टर सुधीर बाबू, पुराने मार्क्सवादी रंगनाथ बाबू, भागलपुर विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग से सेवा निवृत प्राध्यापक कैलाश बाबू, स्वतंत्रता सेनानी काली बाबू जैसे बुजुर्गों की एक बौद्धिक जमात है जो कर्मक्षेत्र से विस्थापित होने के बाद अपने गाँव में रहते हुए देश दुनिया की खबर रखते हैं और जीवन के बुनियादी सच का तिरस्कार करने वाली नई विश्व व्यवस्था के प्रति बहुत चिंतित रहते हैं। आज अपने गाँव के भीतर इस नई विश्व व्यवस्था को आते देख वे बहुत क्षुब्ध और व्यथित हैं।

महंती चौक पर आज ऐसे ही मुग्ध और क्षुब्ध लोगों के बीच ठन गई है। दो सामानांतर धाराओं में बँटे ऐसे लोग हुलास बाबू के ग्लोबल व्यक्तित्व की मीमांसा करने में लगे हैं। तो आईये सरल रेखा के प्वाइंट ऑफ इन्टरसेक्शन पर खड़ी इस कथा को हम उनके ही वाद–विवाद संवाद से आगे बढ़ायें ––––

□ □ □

'आप खाम्हखाह नाराज हो रहे हैं रंगनाथ बाबू। एक बार ठंडे दिल से सोचिये – जब दुनिया में इतने बड़े–बड़े कॉरपोरेशन और मल्टीनेशनल कंपनियों का राज हो रहा है – अंतर्राष्ट्रीय संबंध नई पृष्ठभूमियों में आकार ले रहा है तब आप अपने ही गाँव के भारतीय मूल के प्रवासी भाई से इतने खफा क्यों हैं ? जरा सोचिये, वैश्विक परिदृश्य में हमारा गाँव इत्र की नगरी के रूप में जाना जायेगा – यह हमारे लिए कितने गर्व की बात होगी।'

क्यों नहीं ? हमारे गाँव के लोग भूखे पेट हों या नंगे बदन – इत्र की नगरी में उनका चित्त हमेशा रहेगा मगन–मगन – यह भी तो गर्व की ही बात होगी –––

रंगनाथ बाबू के इस कटाक्षपूर्ण उत्तर से मंटू बाबू झेप गए।

तभी श्यामलाल इंजीनियर (उनका नाम इसी विशेषण से पूरा होता है) ने गर्मजोशी से कहा – "आपलोग बेमतलब की बहस में क्यों पड़े हैं ? जो चीज सामने दिखाई दे रही है पहले उसे देखिये। इत्र फैक्ट्री के शिलान्यास के साथ ही अपने गाँव का नक्शा कितनी तेजी से बदल रहा है – जरा सोचिये। बर्षों से स्थगित पावर ग्रीड के निर्माण में भी तीव्रता दिखाई दे रही है। रामडीह से मदनपुर होकर विराट नगर तक फोरलेन सड़क बन रही है। ईस्ट–वेस्ट कॉरिडोर के निर्माण की चर्चा भी जोरों पर है। गाँव के लोग अब एक्सप्रेस हाईवे का मजा लेंगे। पलक झपकते रामडीह से जोगबनी, विराट नगर, नेपाल तक की सैर कर आयेंगे। पावर ग्रीड चालू होते ही दुधिया रोशनी में नहा कर चकाचक हो जायेगा हमारा गाँव। अब आप ही बोलिये काका – यह सब खुश होने की बात है न – कि रोने की।"

किसी के कुछ बोलने से पहले बात को बीच में ही कैच करते हुये बैंक मैनेजर सुभाष सिंह ने बदलते परिदृश्य को अतीत की पृष्ठभूमि से जोड़ते हुये कहा – "अंग्रेज आये देश में तो रेल, डाक, तार जैसी कितनी चीजें लाये – हुलास भाई गाँव आये तो बिजली सड़क के साथ खुशनुमा मौसम की सौगात भी लाये। इससे गाँव

की रौनक कितनी बढ़ी है। यह तो जश्न मनाने की बात है भाई – हुलास भाई से नाराज होने की तो कत्तई नहीं। हुलास बाबू के कारण ही तो आज हमारा गाँव ग्लोबल विलेज का रूप ले रहा है – विकास की मुख्य धारा से जुड़ रहा है।''

रंगनाथ बाबू के भीतर कुछ ऐंठ गया। बूढ़ी आँखें खींच गई – 'खूब कहा तुमने – अंग्रेज न आये होते तो भारत में विकास का कोई काम ही नहीं होता क्यों – ? उद्योग–व्यापार, शिक्षा–संचार, रेल, डाक, तार, प्रेस सभी कुछ तो वही लाये। हमारे पास क्या था भला – हम तो कंगाल थे ? भूखे और लाचार थे ? अरे कभी यह भी तो सोचो कि वे जो दे गये उसके एवज में क्या–क्या ले गये। देश आजाद हुआ पर गुलामी की मानसिकता कहाँ गई ? वह तो कुंडली मार कर आज भी तुम जैसों के भीतर बैठी है। तभी तो यह मौसम तुम्हें इतना खुशनुमा लग रहा है। तुम्हारे हुलास बाबू इस गाँव को ग्लोबल विलेज बना रहें हैं या विदेशी नील गायों के लिए चारागाह – तुम क्या जानों ?'

रंगनाथ बाबू के स्वर में एक तीखा दर्द था।

रंग काका तो सचमुच बहुत नाराज हो गये हमसे। लेकिन प्रोफेसर साहब आप बताइये –विश्व को आज जो शक्तियाँ संचालित और गतिमान कर रही हैं उसके पक्ष में होना सही है या गलत ?

'रेड रोज' के डायरेक्टर पंकज कर्ण के प्रश्न पर प्रोफेसर कैलाश बाबू ने बहुत गंभीरता से कहा – 'पक्ष में होना सही है या गलत यह तो अपनी अपनी धारणा है पर मेरा मानना है कि स्वतंत्रता के बाद जिस तरह लोगों के भीतर आजादी का मोह भंग हुआ था उसी तरह इस उदारवादी अर्थव्यवस्था से भी लोगों का मोह भंग होगा। क्योंकि यह विकास पर्वत और खाई के समान असंतुलित है। आज पूंजीवादी शक्तियाँ जिस तरह सभी उत्पादन पर अपना नियंत्रण रखना चाहती हैं – पहले यही बात सामंतों रजवाड़ों पर लागू होती थी। अंग्रेजी हुकूमत के समय इसी इलाके में नील की खेती नगदी फसल थी। किसानों का खून चूस कर ईस्ट इंडिया कंपनी फल–फूल रही थी। आज भी देखें तो देशी विदेशी कंपनियाँ अपने लिये खेतों में अपना उत्पाद पैदा करवाना चाहती हैं। उनका उद्देश्य कहीं से भी किसानों को आत्मनिर्भर या ताकतवर बनाना नहीं बल्कि खुद को और अधिक शक्तिशाली तथा समृद्ध बनाना है। आज हूलास बाबू अगर रामडीह की धरती पर फूल ही फूल उगाना चाहते हैं तो इसके पीछे यहाँ के किसानों के जीवन में रंग गंध भरने की बात नहीं है, बल्कि अपने चेहरे की लाली और अपने जीवन को सुगंधित बनाने की बात है। हुलास बाबू की तरह ही हमारे देश के एक बड़े किसान नेता हैं सुरेन्द्र पवार। किसान नेता होने के कारण ही वे कृषि मंत्री हैं और मंत्रीजी का पूरा परिवार फूलों का व्यापारी है। अब आप ही सोचिये ऐसे व्यापारी नेता किसानों के उत्पाद को कभी सही बाजार दे सकता है ? सच तो यह है कि आज विदेशी कम्पनियों से राजनीतिक पार्टियों की दुरभि संधि ने ऐसी स्थिति पैदा कर दी है कि अब किसानों के पास अपने बीज तक नहीं होंगे। विदेशी कम्पनियाँ ही उन्हें बीज देंगी – बैंक उन्हें कर्ज देगा और बाजार उनका सबकुछ निगल जायेगा। देश का विकास आज इसी रूप में हो रहा है। ऐसे विकास का पक्षधर होना सही है या गलत – आप खुद सोचिए। आज विकास के नाम पर हम भले ही उपलब्धियों का आकाश छू लें, लेकिन मनुष्यता और नैतिकता के लिये हमारे पास कोई जमीन नहीं बचेगी – यह तो तय है।'

सेवा निवृत हेडमास्टर सुधीर बाबू बहुत देर से अपने को जब्त किये बैठे थे। लेकिन अब उन्हें भी कुछ कहने की जरूरत महसूस हुई – आप लोग देख रहे हैं 'रैहका' की जमीन पर इत्र फैक्ट्री का शिलान्यास हो चुका है और उससे सटे साठ एकड़ जमीन के लिए हुलास बाबू कैम्प किये हुये हैं। उन्हें वह जमीन फूलों की खेती के लिये चाहिये। वे उसपर गुलाब, जूही, चमेली उगायेंगे। जिन छोटे–छोटे किसानों को वह जमीन भूदान के समय प्राप्त हुई है, उन्हें प्रलोभन देकर वे अपने पक्ष में कर रहे हैं। मैं जानता हूँ, हुलास बाबू वह जमीन बहुत आसानी से दखल कर लेंगे। लेकिन उसकी बगल में तीस एकड़ की वह बेनामी जमीन जो हुलास बाबू के परदादा ने अपने पुस्तैनी चाकर हरिया कहार के परिवार को वर्षों पहले दे रखी है, उसपर भी हुलास बाबू ने धावा बोल दिया है। गेंहू की बालियों को रौंदते हुये ट्रैक्टरों की आवाज में हरिया के परपोते की मसोमात बीबी लछमिनियां की फरियाद सुनने वाला आज कोई नहीं। यह सब क्या हो रहा है – जरा सोचिये। हुलास बाबू को

किसी चीज की कमी नहीं – फिर दान में दी गई चीज क्यों वापस ले रहे हैं – यह तो घोर अमानवीय है – सरासर अन्याय है।

अमानवीय नहीं है मास्टर साहब। शायद आपको नहीं मालूम लछमिनियां के बड़े बेटे श्याम को हुलास बाबू ने फैक्ट्री में सुपरवाइजरी का काम सौंपा है। सारे कामों का लेखाजोखा हिसाब–किताब सब उसी को देखना है। अच्छी पगार मिलेगी और हुलास बाबू का वह खास आदमी भी बन जायेगा। कोसी की बलुआही माटी कोड़ कोड़ कर अब तक जितना कमाया खाया होगा, उससे अधिक वह बिना मेहनत मजदूरी किये कमायेगा खायेगा। उसकी माँ तो बेवजह हल्ला मचाये है। दरअसल लछमिनियां को बाभन टोला के लोग चढ़ा–बढ़ा रहे हैं, क्योंकि हुलास सिंह के ग्लोबल व्यक्तित्व को देख उनके कलेजे पर सांप लोट रहा है। वैसे भी ड्योढ़ी वालों से उनलोगों की पुस्तैनी लड़ाई है। लछमिनियां को बेटे के विरुद्ध खड़ी करके वे हुलास बाबू के काम में अड़ंगा लगाना चाहते हैं।

ट्रांसपोर्ट मालिक मंटू बाबू के इस कथन की हाँ में हाँ मिलाते हुये श्यामल बिहारी, सुभाष सिंह ने एकजुट होकर सहमति जताई।

आप बिलकुल ठीक कहते हैं भाइजी, चढ़ाने बढ़ाने के कारण ही लछमिनियां आंय–बांय बक रही है। बेटे को जब एतराज नहीं जमीन देने में तो लक्ष्मिनियां के आंय–बांय बकने से क्या होगा ?

मित्रों की पक्षधरता से उत्साहित होकर मंटू बाबू ने फिर मोर्चा संभाला – ''आखिर ड्योढ़ी वालों की दी हुई जमीन में कितना धान गेंहू उपजता है उसे ? पूँजी के अभाव में आधी जमीन तो परती ही रहती है उसकी। अब हुलास बाबू उस जमीन पर फूलों की खेती करेंगे – बिना एक पैसा पूंजी लगाये लछमिनियां का पूरा परिवार चैन से खायेगा पियेगा। इससे बड़ा सुख अब क्या होगा उसके लिए ? वैसे भी ड्योढ़ी वालों के द्वारा दी गई यह कोई रजिस्ट्री जमीन तो है नहीं – बेनामी जमीन पर कितने पुश्त दावा ठोके रहेगी लक्ष्मिनियां ?''

अचानक रंगनाथ बाबू बिफर पड़े – ''क्यों नहीं दावा ठोकेगी लछमिनियां ? आखिर यह जमीन उसकी परददिया सास सोनारी दाई की बंधक रखी 'छाती' का इनाम है – पूरा गाँव जानता है इस भेद को – भले कोई कुछ न कहे मुँह से। बोलिये काली बाबू मैं सच कह रहा हूँ कि नहीं ?''

समर्थन के लिए उन्होंने अपने पुराने मित्र स्वतंत्रता सेनानी काली शरण की ओर देखा और फिर अपनी रौ में कहने लगे – ''हुलास बाबू के सात पुश्तों का इतिहास भूगोल जानता हूँ मैं। आपको शायद नहीं मालूम महंत रामइकबाल सिंह की वंश बेल सूख जाती अगर सोनारी दाई की छाती का क्षीर उनके मुँह में न पड़ता। रामइकबाल सिंह की माँ के दूध में जहर था। कई बच्चे काल कलवित हो गये। जब वैदों ने परखा तो जालिम जमींदार बलभद्र सिंह ने अपने इकलौते नाती और अपनी रियासत के इकलौते वारिश को बचाने के लिये दरबारी चाकर की बीवी को जर–जमीन की तरह महल में बंधक बनाकर दो साल तक रखा। उसकी अपनी गोद का नवजात शिशु दुधकट्टू होकर मर गया। सोनारी दाई तब भी महल की कैद से नहीं निकल पाई। तीस एकड़ की यह जमीन उसी क्षीरपान की कीमत है। आज उसका कागज – उसकी रजिस्ट्री खोजने वाले कौन होते हैं आप या आपके हुलास बाबू ?''

भावनाओं के आंतरिक दबाब से रंगनाथ बाबू के स्वर का तापमान इतना बढ़ गया कि उनकी आवाज रूंघ गई – उनके चेहरे की एक–एक शिरायें खिच गईं और वे गहरी सांसें खिंचने लगे। महंती चौक पर इत्र का इश्तहार बाँटती हवा अचानक बिषैली हो गई।

वाद–विवाद–संवाद का महौल एकाएक बहुत उत्तेजित होकर अप्रीतिकर हो उठा।

मंटू बाबू ऐसी अपमानजनक प्रतिक्रिया के लिए बिलकुल तैयार नहीं थे। उनके भीतर भी एक उबाल आया। आक्रामक तेवर अख्तियार करते हुए उन्होंने दो टूक शब्दों में कहा – ''रजिस्ट्री का कागज देखने वाला मैं कौन होता हूँ ? आप मुझे क्यों बुरा भला कह रहें हैं ? ये सारी बातें हुलास बाबू के मुँह पर कहिये न – आपके पास तो उनके पितरों की प्रामाणिक वसीयत है, जाइये उसे दिखा कर लछमिनियां को न्याय दिलवाइये।''

कथन की भंगिमा इतनी निर्मम थी कि प्रतिउत्तर के लिए कोई दूसरा स्वर नहीं फूटा।

इस विमर्श को खासा अशोभनीय स्थिति में पहुँचा देख प्रो. कैलाश बाबू ने उठने का उपक्रम करते हुये अपने समकालीनों की ओर देख कर कहा – ''चलिए अब रामडीह को उसके भाग्य पर छोड़िये, रामडीह की वह धरती जहाँ आजादी के दीवानों ने क्रांति के अग्निबीज बोये थे – आग के फूल खिलाये थे, अब उस धरती पर ब्रांडेड कंपनियों के लेबुल लगाकर 'गजल इतर' और 'खुशबू संदल' का व्यापार होगा। इस उत्सवधर्मी आयोजन पर बेवजह हम अपने मन को क्यों घुलायें ?''

स्वतंत्रता सेनानी काली बाबू ने चलते चलते एक शेर पढ़ा –

'बागबाँ आया कि गुलिस्ताँ में सैय्याद आया
जो कोई आया मेरी जान को जल्लाद आया'

चलिये बंधुओं, हम अपने घर को चलें। इस उत्सवधर्मी आयोजन में महंथी चौक पर तुरही बजाने, बंदनवार सजाने का काम जिन्हें करना है वे करें ।

मित्रों ! कथा वाचक उठ गये हैं। इत्र की नगरी को लेकर एक संशय भरा भविष्य मेरे मन के भीतर घर कर गया है। फिलहाल इस भविष्य को लेकर मैं किसी भी भविष्यवाणी के पक्ष में नहीं हूँ।

आप चाहें तो कथा को विस्तार देने के लिए – उसके भविष्य की शिनाख्त के लिए महंती चौक पर फिर यह घमासान छेड़ सकते हैं। आपसे यह कथा गंभीर हस्तक्षेप की मांग करती है – इति !

□ □ □

प्रकाशित – पाखी , फरवरी 2012